73

जुलाई-दिसम्बर, 2017

मध्य भारती

मानविकी एवं समाजविज्ञान की द्विभाषी शोध-पत्रिका

Scanned by Scanner Go

अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग

मध्य भारती

मानविकी एवं समाजविज्ञान की द्विभाषी शोध-पत्रिका

ISSN 0974-0066
(अंक-73, जुलाई-दिसम्बर, 2017)

संरक्षक
प्रो. राघवेन्द्र पी. तिवारी
कुलपति

प्रधान सम्पादक
प्रो. अम्बिकादत्त शर्मा

सम्पादक
प्रो. निवेदिता मैत्रा
डॉ. पंकज चतुर्वेदी
डॉ. आशुतोष कुमार मिश्र

प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. छबिल कुमार मेहेर

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय
सागर (मध्यप्रदेश) - 470003
दूरभाष : (07582) 264455
ई-मेल : madhyabharti.2016@gmail.com

Scanned by Scanner Go

अनुक्रमणिका

गाँधी और उत्तर-गाँधी सर्वोदयी-विमर्श 5
आभा नवनी

शिशुपालवध में चित्रित प्रकृति-चित्रण 27
पी. डी. सिंह

काव्य के निकष पर उत्तर राम 49
आशुतोष

भारतीय महिलाओं के राजनैतिक सशक्तीकरण में नेहरू की भूमिका 58
अनुपमा कौशिक

नव-उदारवादी समाज, मीडिया और स्त्री 70
आकांक्षा

संगीत चिकित्सा एवं तंत्रिकातंत्र विज्ञान 75
अवधेश प्रताप सिंह तोमर

ह्वाइटहेड का प्रक्रिया दर्शन 83
सुचेता शुक्ला

विट्गेन्स्टाइन के भाषा-खेल और धुरी निश्चितता का नीतिशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य 92
मंजेश कुमार

जैन दर्शन में आत्मा और उसका ज्ञातृत्त्व 97
सचिन्द्र जैन

'तिलहरी' एक नवीन प्रागैतिहासिक पुरास्थल 110
सुल्तान सलाहुद्दीन

पूर्व मध्यकालीन भारत की चंदेलवंशीय अर्थव्यवस्था 122
आर. पी. सिंह एवं विशाल विक्रम सिंह

समकालीन युवाओं में फैशन और व्यक्तित्व विकास 131
अनिता सिंह

साम्प्रदायिकता का बदलता स्वरूप और समकालीन कहानी 137
सुशील कुमार गर्ग

बेहतर प्रबंधन से बदलेगी कृषि की तस्वीर 144
केशव टेकाम एवं तुलसीराम दहायत

Scanned by Scanner Go

बेहतर प्रबंधन से बदलेगी कृषि की तस्वीर

केशव टेकाम एवं तुलसीराम दहायत

सभ्यता के आरंभ से ही मानव कृषि पर अधिक निर्भर रहा है तथा समय-समय पर उसने इसकी पद्धतियों में काफी परिमार्जन किया है। फिर भी, यह एक विचित्र संयोग रहा कि हमारे देश का कृषक कभी भी सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से संतुष्ट नहीं रहा। भू-स्वामित्व और उत्पादकता की भिन्नता ने सामाजिक आर्थिक असमानता में और वृद्धि की। वर्तमान में, बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति का भूमि पर दबाव निरंतर बढ़ रहा है। जबकि प्रकृति प्रदत्त यह उपहार सीमित है। अतः ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि हम भूमि की उत्पादकता में वृद्धि के लिए नई तकनीक, उन्नत बीज एवं खाद का प्रयोग करें तथा सिंचाई सुविधाओं में विस्तार करें।[1]

कृषि से आय का अनुमान फसलों की उत्पादन लागत पर निर्भर करता है। यह अनुमान, न्यूनतम समर्थन मूल्य, कीमतों में नियंत्रण व स्थायित्व, कृषकों में प्रेरणा, उत्पादन प्रबंधन व मात्रा से प्रभावित होता है। लागतों में वृद्धि और निम्न मौद्रिक प्रतिफल के कारण कृषि आज अनेक व्यष्टि व समष्टिगत कारणों से कम प्रतिफल वाला क्षेत्र बन गया है। कृषि में उन्नत तकनीक का उपयोग किसानों की कृषि-लागत में वृद्धि का एक बड़ा कारण है। उन्नत बीज, उन्नत खाद, उन्नत सिंचाई सुविधाऐं व उन्नत कृषि आदानों का प्रयोग कृषि निवेश के मंहगे होने का प्रमुख कारण है। प्रश्न यह है कि क्या उन्नत कृषि तकनीक कृषकों को कृषि में निवेश के बेहतर परिणाम दे पाती है या नहीं। बड़े व मध्यम किसानों को तो आधुनिक कृषि तकनीक के उपयोग से लागतों की तुलना में आय अधिक होती है परन्तु वहीं सीमांत व लघु कृषकों की जोत का आकार छोटा होने के कारण कृषि लागत अधिक व आय कम होती है। फलस्वरूप ये कृषक ऋणग्रस्तता के शिकार हो जाते हैं। कृषि लागतें अधिक होने के कारण छोटे व सीमांत कृषकों की कृषि संबंधी निर्णय क्षमता भी प्रभावित होती है। सच तो यह है कि ये किसान जीवन निर्वाह के लिए ही कृषि कार्य करते हैं। सरकार द्वारा छोटे व सीमांत कृषकों की कृषि लागत व आर्थिक हितों के संरक्षण को लेकर न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा की जाती है और लागतों के प्रभाव को कम कर कृषि को जीविका के साधन के साथ-साथ लाभ का व्यवसाय बनाने का प्रयास किया जाता है।[2]

कृषि लागत -

भारत में वर्ष 1970-71 में औसतन कृषि लागत 1417.05 रुपये प्रति हेक्टेयर थी जो कि 1981-91 के मध्य औसतन 2100.57 रुपये प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष हो गयी। नई आर्थिक नीति लागू होने के पश्चात् कृषि लागतों में तेजी से वृद्धि हुई है तथा 1991-2001 के दशक में औसतन छह गुणा बढ़कर 12669.48 रुपये प्रति

मध्य भारती-73, जुलाई-दिसम्बर, 2017, ISSN 0974-0066, *pp. 144-149*

Scanned by Scanner Go

हेक्टेयर प्रतिवर्ष हो गई। वर्तमान में तो यह और अधिक तेज गति से बढ़ रही 2004-05 में कृषि लागत बढ़कर 19910.52 रूपये प्रति हेक्टेयर तथा 2011-12 में यह बढ़कर लगभग 38409 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गई। पिछले पांच वर्षों में कृषि लागत दो गुनी हुई है।[3] इसी प्रकार वर्ष 1970-71 में जो पारिश्रमिक व्यय औसतन 230.56 रूपये प्रति हेक्टेयर था वह 1990-2001 के दशक में बढ़कर 368.56 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गया तथा 2004-05 में बढ़कर 758.16 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गया। 2011-12 में पारिश्रमिक व्यय लगभग 8 गुणा बढ़कर 1642.43 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गया। इस प्रकार कृषि हेतु पारिश्रमिक व्यय में भी तेजी से वृद्धि हुई है। उर्वरक का उपयोग भी 1970-71 में औसतन प्रति हेक्टेयर 100.75 रूपये था वह 1990-2001 के दशक में बढ़कर प्रतिवर्ष 227.85 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गया। इसी प्रकार वर्ष 2004-05 में बढ़कर 1716.84 रूपये तथा 2011-12 में बढ़कर 4013 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गया। स्पष्ट है कि उर्वरक के उपयोग व्यय में भी भारी वृद्धि हुई है। इसी प्रकार वर्ष 1970-71 में बीज की लागत 92.44 रूपये प्रति हेक्टेयर व सिंचाई लागत 83.99 रूपये प्रति हेक्टेयर आती थी, जो 1991-01 के दशक में बढ़कर क्रमशः 289.16 रूपये प्रति हेक्टेयर औसतन प्रतिवर्ष हो गई। 2004-05 में भी क्रमशः 1109.1 रूपये व 2034.49 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गई। 2011-12 में यह बढ़कर 2518 रूपये प्रति हेक्टेयर व 2100 रूपये प्रति हेक्टेयर हो गई। वर्ष 2011-12 में कृषि उपज का मूल्य लगभग 3673 रूपये प्रति हेक्टेयर था जो अधिक लागतों के कारण लाभप्रद नहीं था। अधिकांश कृषकों के लिए आज कृषि घाटे का सौदा बन गयी है। एन.एस.एस.ओ. का भी अनुमान है कि यदि विकल्प मिले तो 42 प्रतिशत तक किसान कृषि कार्य छोड़ सकते हैं। कारण कि किसानों को उनकी लागत ही नहीं मिल रही है। लागत व्यय बढ़ने से देश के किसानों की स्थिति बदतर होती जा रही है।[4]

मध्यप्रदेश के दमोह जिले में 70 किसानों के सर्वेक्षण के आधार पर शुद्ध आय में जिले की विभिन्न तहसीलों के मध्य विभिन्नता देखने को मिलती है। परिवारों में विभिन्न वर्गो में शुद्ध आय में प्रत्येक गांव में, प्रत्येक वर्ग में और प्रत्येक फसल प्रतिरूप में एक भिन्नता देखने को मिलती है। फसल उत्पादन से शुद्ध आय सकारात्मक रूप से उत्पाद के आर्थिक पैमाने से सीधे संबंधित हैं। बड़े किसानों की सकल आय 4869 रूपये प्रति हेक्टेयर है और सीमांत किसान की 1052 रूपये प्रति हेक्टेयर, तात्पर्य सीमांत किसानों की प्रति हेक्टेयर उत्पादन का मूल्य बड़े किसानों की तुलना में कम है।[5]

आँकड़े यह भी प्रस्तुत करते हैं कि उपलब्ध संसाधनों से सीमांत किसान तुलनात्मक रूप से लाभदायी खेती करने में असमर्थ हैं। जिन फसलों का उत्पादन बड़े व सीमांत किसान दोनों करते है। उनमें तुलनात्मक रूप से सीमांत किसान को बहुत ही कम शुद्ध आय प्राप्त होती है। एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह देखने को मिली की फसलों का चयन न केवल भूमि की प्रकृति व पानी की उपलब्धता पर निर्भर करता है। बरन् यह आर्थिक समस्या पर भी बहुत हद तक निर्भर है। श्रम लागत अन्य लागतों की तुलना में सर्वाधिक है।[6]

मध्यप्रदेश में कृषि की समस्यायें -

प्रदेश में कृषि जोतें असमान आकार की है और अधिकतर कृषि क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है प्रदेश की अन्य बड़ी कमजोरियों में कम सिंचाई, भू-जल स्तर में गिरावट, प्रमुख फसलों की कम औसत उत्पादकता, पशुओं की अपर्याप्त व कम गुणवत्ता वाला चारा, असंतुलित खाद उपयोग, शीत गृह श्रृंखला और कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की कमी, बुनियादी आगतों की कमी, उन्नत बीजों की कम उपलब्धता एवं उपयोग और कम तथा अनिश्चित बिजली आपूर्ति, कृषि शोध शिक्षा और विस्तार में कम निवेश, सम्पर्क सड़कों की कमी आदि शामिल हैं।

प्रदेश के कृषि विकास में प्रमुख चुनौतियों के रूप में कम व अनियमित वर्षा एक बड़ा कारण है

Scanned by Scanner Go

जिसकी वजह से प्राकृतिक आपदाएं आती हैं। एवं इसके फलस्वरूप उत्पादन की लागत बढ़ती है। बोआई तथा कटाई के दौरान शीर्ष मांग की अवधि में कृषि श्रमिकों की कमी होती है। भूजल स्रोतों में पानी और नीचे चला जाता है। इसके साथ ही समय पर कृषि आदानों की उपलब्धता में कमी रह जाती है। और उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित नहीं हो पाती है। एवं पर्याप्त भण्डारण तथा शीतगृह श्रृंखला सुविधाओं का आभाव होता है। प्रदेश में कृषि आधारित उद्योगों की कमी और बाजार व्यवस्था में सुधार भी बड़ी चुनौति है। प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए कृषि का विकास करना जरूरी है विशेषकर कम वर्षा की स्थिति में इसके लिए संभावित जलवायु परिवर्तन से प्रदेश को अनुकूलित करना तथा सूखा, बाढ़, पाला तथा ओला आदि की प्राकृतिक आपदाएं भी प्रदेश के समक्ष बड़ी चुनौति है। अनियमित वर्षा, बिजली आपूर्ति में कमी, मशीनों की अधिक कीमतें, मिट्टी की उर्वरा शक्ति में कमी, श्रम का लगातार मंहगा होना, सिंचाई हेतु पानी की उपलब्धता, बड़े किसानों पर निर्भरता आदि ऐसे कारण है जो सीधे कृषि उत्पादन को प्रभावित करते हैं।[7]

कृषि आय में वृद्धि के उपाय -

सकल उत्पाद मूल्य में और वृद्धि करने के लिए उन्नत कृषि तकनीक को अपनाने की आवश्यकता है और इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु वित्तीय संस्थाओं द्वारा पर्याप्त मात्र में वित्त उपलब्ध कराया जाना चाहिए। कृषि वैज्ञानिकों को नयी किस्म के बीजों और तकनालॉजी के निष्पादन को प्रति एकड़ शुद्ध आय के रूप में व्यक्त करना चाहिए न कि प्रति एकड़ उत्पादित के रूप में। उत्पादन और फसल उपरांत तकनालॉजियों में उचित समन्वय कायम करना जरूरी है। ग्रामीण फार्म विज्ञान प्रबंधकों का एक संवर्ग तैयार करना चाहिए जिसके लिए प्रत्येक पंचायत के कुछ सदस्यों को नई तकनीकीयों के प्रबंध के लिए प्रशिक्षण देना होगा। बिजली की अनुपलब्धता एक बड़ी समस्या के रूप में सामने आई है। इसे दूर करने हेतु पर्याप्त मात्रा में बिजली गांवों में उपलब्ध कराई जानी चाहिए या कोई अन्य विकल्प जैसे सौर ऊर्जा आदि संसाधनों की पर्याप्त जानकारी व प्रशिक्षण लोगों को दिया जाना चाहिए।

विद्युत संपर्क, अतिरिक्त आदान सहायता, फसल बीमा पर कम प्रीमियम आदि के माध्यम से संरक्षित कृषि को प्रोत्साहित किया जा सकता है। मशीनों की समस्या हल करने हेतु महत्वपूर्ण उपाय छोटी मशीनों की उपलब्धता। लघु, मध्यम व सीमांत किसानों को यदि कृषि यंत्र छोटे आकार के खेत के उपयोग हेतु मिलते हैं तब कृषि मशीनों के मूल्यों की समस्या हल हो सकती है। किसान मृदा की जांच नहीं कराते है सरकारी तौर पर मृदा की जांच कर उन्हें उर्वरक की उचित सलाह दी जानी चाहिए। भूमि स्वास्थ्य सुधार के लिए भूमि में समष्टि एवं व्यष्टि पोषकों द्वारा और भूमि की भौतिकी एवं सूक्ष्म जैविकी उन्नत करनी होगी।

खेतों पर बेहतर जल प्रबंधन उपयुक्त उपायों जैसे बेहतर फसलन प्रतिमान और फसल संयोजन, सहभागी जल प्रबंधन आदि के जारी सृजित और प्रयुक्त सिंचाई क्षमता के बीच अंतर को न्यूनतम किया जा सकता है। जल संरक्षण द्वारा पानी की सुरक्षा करनी होगी और पानी के कुशल एवं समतापूर्ण प्रयोग के लिए ग्राम सभाओं को "पानी पंचायतों" के रूप में सशक्त बनाना होगा। एक जल संग्रहण प्रणाली स्थापित करनी होगी विशेषकर ऐसे क्षेत्रों में जिनमें विश्वसनीय सिंचाई का अभाव है। जल उपयोग क्षमता को बढ़ाने के लिए तीव्र गति से सिंचाई के विस्तार की जरूरत है।[8]

मध्यप्रदेश का कृषक शिक्षित नहीं है कृषि से संबंधित ज्ञान या तो परम्परा में मिला है या अनुभव से अर्जित किया है आधुनिक कृषि पद्धति तकनीक, उन्नत बीज, सिंचाई, रसायनिक खादय आदि की उचित जानकारी किसानों को नहीं रहती है यदि उक्त जानकारी समय पर आसानी से उपलब्ध करा दी जावे तो कृषि विकास में क्रांतिकारी परिवर्तन किया जा सकता है। किसान को संचार के साधन जैसे मोबाईल, जनजागरूकता

Scanned by Scanner Go

कार्यक्रम, प्रशिक्षण आदि की सुविधा उपलब्ध करायी जा सकती है। जैसे शासन गहरी जुताई अभ्यास के लिये हलधर योजना, लागू की है। इसी तरह से अन्य कृषि कार्यो के लिए भी किया जा सकता है।

हमें तुरंत ऋण सुधारों के बारे में पहल करनी होगी जिसके साथ उधार एवं बीमा, साक्षरता को बढ़ावा देना होगा। उधार वितरण प्रणाली को स्त्रियों के प्रति संवदेनशील बनाना होगा। वैज्ञानिक ज्ञान और जमीनी स्तर पर इसके कार्यान्वयन के बीच अंतर को उत्पादन के स्तर पर और फसल उपरांत खेती के स्तर पर कम करना होगा। भारत निर्माण के अधीन ज्ञान संयोजन के कार्य को पूरा करने के लिए ग्राम ज्ञान केन्द्र या ग्राम चौपाल स्थापित करने होंगे। सिंचाई के साधनों का विस्तार होने से कृषि उत्पादकता एवं उत्पादन दोनों मे परिवर्तन होता है। छोटे एवं सीमांत कृषकों को सिंचाई के साधन आसानी से उपलब्ध कराकर इस चुनौती का समाधान किया जा सकता है। शासन स्तर पर गाँव-गाँव में कृषि टेंट लगाकर आदानों की पूर्ति आसान कीमत एवं सरलता से की जा सकती है।

अधिक आगतों के प्रयोग द्वारा उन्नत किस्म के बीजों, उर्वरकों व अन्य आगतों का प्रयोग करने वाली नई कृषि तकनीक के और प्रसार द्वारा कुल कृषि उत्पादन में वृद्धि लाई जा सकती है। किसानों को इस बात के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए कि वे खाद्यान्नों का बढ़ता हुआ हिस्सा बाजार में बेचने के लिए तैयार हों। अत्याधिक कीमत वृद्धि से उपभोक्ताओं की रक्षा करना, विशेष रूप से निम्न आय वर्ग के उपभोक्ताओं की उन वर्षों में जब आपूर्ति मांग से काफी कम हो और बाजार कीमतों में लगातार वृद्धि हो रही हो। कृषि विपणन में वृद्धि के लिए कृषि उत्पादों के श्रेणी विभाजन तथा प्रमापीकरण पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इससे कृषक को अपनी उपज का उचित मूल्य तो मिलता है। बाजार का विस्तार होता व उपज में सुधार होता है।

न्यूनतम समर्थन मूल्य का व्यापक प्रचार-प्रसार गांव-गांव तक किया जाना चाहिए जिससे कोई भी किसान न्यूनतम समर्थन मूल्य से कम कीमत पर फसल की बिक्री न कर सके। प्रत्येक गांव में सरकारी विक्रय केन्द्र की स्थापना की जानी चाहिए जो प्रत्येक समय खरीददारी कर सके एवं समय समय पर न्यूनतम समर्थन मूल्य की जानकारी किसानों को दे सकें। ग्रामीण क्षेत्र के दूर दराज ग्रामों में भी अधिक से अधिक क्रय केन्द्र स्थापित करने चाहिए, क्योंकि कृषक अपनी उपज इन केन्द्रों में बेचना अधिक अच्छा समझते हैं तथा इससे ग्रामों में होने वाली बाध्य बिक्री को रोकने में सहायता मिलेगी। प्रशिक्षित कृषकों की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में निरंतर वृद्धि हो रही है अर्थात शासन द्वारा चलाई जा रही योजनाऐं एवं प्रयास सफल हो रही है। अतः हम कह सकते हैं कि इन योजनाओं और प्रयासों की गति में वृद्धि कर अधिक से अधिक कृषकों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए तथा तहसील स्तर पर "कृषि अनुसंधान केन्द्र" एवं प्रशिक्षण केन्द्र की व्यवस्था की जानी चाहिए। जिसके फलस्वरूप कृषकों को सुविधा होगी व शासन को भी अच्छे परिणाम प्राप्त होंगे।

आधारभूत ढांचे का विकास बिजली, पानी, संचार आदि सुविधाओं में वृद्धि होने से न केवल प्रति हेक्टेयर उत्पादकता बढ़ेगी वरन् कृषि विपणन में भी क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिलेगा। भंडारण सुविधाओं का विकास होने से खाद्यान्न नुकसान कम होगा। सिंचाई की अत्याधुनिक सुविधाऐं उत्पादकता में वृद्धि करेगी साथ ही भूमि के खेती योग्य क्षेत्र में वृद्धि होगी। परिणामस्वरूप उत्पादन पूर्व की तुलना में अधिक होगा।

उत्पादकता बढ़ाने के लिए एक सुदृढ़ कृषि प्रसार प्रणाली स्थापित करने की आवश्यकता है। कृषि प्रसार अधोसंरचना का प्राथमिक उद्देश्य अधिक से अधिक किसानों को सुविधाओं का लाभ पहुंचाना और उनकी समस्याओं का प्रभावी रूप से समाधान करना होना चाहिए। कुछ विशेष फसलों को बढ़ावा देने के लिए अलग रणनीति बनाना चाहिए। औसत जोतों के छोटे होने, सिंचाई सुविधाओं की कमी को देखते हुए फसल सघनता में वृद्धि करनी होगी। इसके लिए सभी लंबित सिंचाई परियोजनाओं, तत्परता से पूर्ण की जानी चाहिए,

Scanned by Scanner Go

मध्यम एवं लघु सिंचाई परियोजना की क्षमता के उपयोग में बढ़ोत्तरी को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। सभी संभावनाओं वाले क्षेत्रों में जल संग्रहण विकास परियोजनाएं लागू की जानी चाहिए। सभी वन ग्रामों एवं अन्य बेकार भूमि में संयुक्त वन प्रबंधन समितियां बनाई जानी चाहिए। जल के प्रवाह में वृद्धि के प्रयास भी किये जाने चाहिए साथ ही नवीन कृषि तकनीकी, प्रभावी तालाब प्रबंधन व जल संरक्षण उपायों के माध्यम से कम वर्षा की स्थिति में फसलों को हानि से बचाने का प्रयास किया जाना चाहिए। वर्षा आधारित क्षेत्रों में कम रासायनिक खादों का उपयोग कर खेती की लागत को कम करने का प्रयास करना होगा।

उपज बढ़ाने व फसलों को होने वाली हानि को रोकने के साथ-साथ स्वीकार्य गुणवत्तायुक्त उत्पाद तैयार करने के लिए समन्वित प्रयास करने की आवश्यकता है। फसलों को लगने वाले कीड़ों को प्रभावी ढंग से रोका जाये और एकीकृत कीट प्रबंधन को बढ़ावा देने के लिए प्रभावी कदम उठाये जायें, जिससे की अच्छी गुणवत्ता के कीटनाशक किसानों को उचित मात्रा में उपलब्ध हो सकें और वे गुणवत्ता पर समुचित ध्यान देकर अच्छे कीटनाशकों का उपयोग करने में समर्थ हों। कीटनाशक अवशेष परीक्षण की समीक्षा तथा पशु उत्पादों में गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए वर्तमान व्यवस्था को सुदृढ़ किया जाना चाहिए। जनपद स्तर पर पंचायतों के उपयुक्त प्रशिक्षण देकर इस तरह के कार्यों में उनकी सेवाएं प्रभावी रूप से ली जा सकती है।

चयनित क्षेत्रों में राज्य को कुछ विशेष जिन्सों की जैविक खेती के विकास हेतु प्राकृतिक लाभ उपलब्ध हैं। परन्तु इसका पूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिए सभी आगतों एवं उत्पादन के परीक्षण, वर्गीकरण एवं प्रभावीकरण करने से संबंधित सेवाओं को स्थापित करने एवं उनके उपयुक्त मूल्य एवं विपणन सुनिश्चित करने पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। विविध कृषि जलवायु होने के फलस्वरूप राज्य में उद्यानिकी फसलों की पर्याप्त क्षमता है इसको प्राप्त करने हेतु उन्नत पौध पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराना आवश्यक है। राज्य में अनेक रोपणियां हैं जिनमें रोपण सामग्री उपलब्ध है परन्तु उनकी संख्या, गुणवत्ता और उनके संचालन का स्तर विशेष रूप से बढ़ाने की आवश्यकता है।

जलवायु परिवर्तन कृषि के लिए एक बड़ी चुनौति के रूप में उभरा है। आज किसानों के सामने तात्कालिक रूप से जो समस्या खड़ी है वह वर्षा में अन्तर मौसमी परिवर्तनशीलता, अत्याधिक वर्षा और बेमौसम बारिश से संबंधित है। इन विशेष परिस्थितियों के कारण फसलों और पशुओं को काफी नुकसान होता है। अतः जलवायु के अनुकूल फसलों की किस्म विकसित करने के प्रयासों के साथ-साथ फसल पद्धतियों और प्रबंधन तरीकों में उपयुक्त बदलाव लाने के लिए किये जाने वाले प्रयासों को तेज किया जाना चाहिए।

कृषि को लाभप्रद बनाने एवं कृषि क्षेत्र में युवाओं की भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु कृषि का व्यावसायीकरण आवश्यक है। अधिक से अधिक क्षेत्रों में वर्मी कम्पोस्ट खाद के उपयोग को प्रोत्साहित करने हेतु सरकारी प्रयास व उचित अनुदान दिया जाना चाहिए। मण्डियों में निजी निवेश को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जिससे निवेश में कमी की समस्या को दूर किया जा सकता है। म.प्र. देश के केन्द्र में स्थित होने के कारण सुलभ सुविधा हब के रूप में विकसित हो सकता हैं। अतः विभिन्न कृषि के उत्पादों के विशेष बाजार स्थापित किये जा सकते हैं जो अंतर्राष्ट्रीय बाजारों से जुड़े हुए होंगे। लघु एवं सीमांत कृषकों को दलालों से बचाने हेतु कृषकों को सामान्य पंजीकरण कर वार्धित मूल्य पर वेट से पूर्व आयकर में छूट दी जावे इस माध्यम से किसान सीधे बाजार में जा सकेंगे एवं मध्यम दलालों का दखल समाप्त होगा। कृषि में संस्थागत ऋण उपलब्धता बढ़ाने हेतु राजनीतिक दखल कम करते हुए वित्तीय संस्थाओं, सहकारिता आंदोलन के सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता है। लगभग 85 प्रतिशत किसानों के पास 2 हेक्टेयर से कम कृषि भूमि है और उनकी

Scanned by Scanner Go

आजीविका कृषि पर निर्भर है। इसलिए, कम लागत एवं कम वजन वाले बहुउद्देशीय कृषि उपकरणों को शुरू एवं विकसित करके इन छोटे किसानों पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है।

भारतीय कृषि की यह विडम्बना रही है कि भारत में अधिकांशतः जीविका एवं गुजारे की फसल का उत्पादन होता रहा है। अगर हम जीविकोपार्जन कृषि के साथ अधिक लाभ देने वाली फसलों के उत्पादन में वृद्धि करें तो न केवल कृषकों की आय में वृद्धि की जा सकती है बल्कि देश की अर्थव्यवस्था में भी तेजी आ सकती है। हालांकि कृषि को लाभदायक बनाने हेतु निरंतर प्रयास हुए है लेकिन हम कृषि का कोई ऐसा मॉडल विकसित नहीं कर पाए हैं जिससे कृषकों को कृषि में रोजगार अथवा लाभ का लक्ष्य दिखाई दे। निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के लिए कृषि को एक व्यावसायिक मॉडल की तरह सरकारी तौर पर पेश किया जाए। कृषकों को इस बारे में आश्वस्त करने की जरूरत है कि कृषि भी एक व्यवसाय है और इसमें लाभ की असीम संभावनाएं हैं। इसके लिए जहां निचले स्तर पर कृषकों को व्यावसायिक खेती हेतु सुविधाएं उपलब्ध कराने एवं प्रोत्साहित करने की जरूरत है वहीं सरकार द्वारा सिंचाई, प्रशिक्षण, संसाधन उपलब्धता, शोध अनुसंधान में मदद से ही खेती को फायदे का सौदा बनाया जा सकता है।

डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय
सागर (म.प्र.)

शासकीय कन्या महाविद्यालय
दमोह (म.प्र.)

सन्दर्भ -

1. दत्त एवं सुन्दरम (2014) : भारतीय अर्थव्यवस्था, एस.चांद पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 560
2. Chandra, D, (2001) : Crucial Agriculture Problems Facing Small Farmers, Political Economy Journal of India, Vol.10, pp.1-4
3. राघवन, एम. : इकोनोमिकल एवं पोलिटिकल वीकली, पृ.123-127
4. वही, पृ. 123-127
5. स्वयं के सर्वेक्षण पर आधारित
6. कृषि आर्थिक सर्वेक्षण : योजना, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, 2012, पृ.72-74
7. कुरुक्षेत्र, वर्ष 61, अंक 03 पृ. 34
8. भारतीय कृषि की स्थिति (2012-13) : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, कृषि एवं सहकारिता विभाग, नई दिल्ली, पृ. 1

Scanned by Scanner Go